सम्पादकीय

अगच्छन् वैनेतेयोऽपि पदमेकं न गच्छति

प्रिय मित्रों

शोध पत्रिका के प्रथमांक के सम्पादकीय लेखन के समय में रोमांचित था, प्रफुल्लित था, प्रमुदित था, आशान्वित था तथा आश्वस्त था। अखिल भारतीय राजनीति विज्ञान परिषद की स्थापना के सत्तर वर्ष बाद भारतीवर्ष की राष्ट्रीय भाषा में राष्ट्रीय परिषद द्वारा शोध पत्रिका प्रारम्भ करने का रोमांचकारी था। इस शोध पत्रिका के प्रथमांक से सम्पादक के रूप में संयुक्त होने की कल्पना प्रफुल्लकारी थी। मित्रों, सहयोगियों तथा शुभच्छुओं की शुभांशसाएँ आमोदकारी थीं। वर्षों से हिन्दी भाषा में स्तरीय शोध पत्रिका के अभाव में व्यथित जिज्ञासु समाज की सहयोगपरक आश्वस्तियाँ आशादायक थी। साथ ही प्रामाणिक, आधिकारिक, अनुभवजन्य, वैज्ञानिक, मौलिक, चिन्तनपरक और विश्लेषणात्मक आलेखों की प्रचुर सम्भावनाओं और नाममात्र की सहयोग राशि के कारक की सहजता आश्वस्तिकारक भी थी। परन्तु प्रथमांक के बाद द्वितीय अंक के प्रकाशन में एक वर्ष से अधिक का समय व्यतीत हो जाने के लिए एकमात्र स्वयं को दोषी मान रहा मैं इस सम्पादकीय के लिखे जाते समय कदाचित निराशा और हताशा नही तो चिन्तित एवं व्यथित अवश्य हूँ।

सर्वप्रथम, अखिल भारतीय राजनीति विज्ञान परिषद के तत्वाधान में प्रकाशित यह शोध पत्रिका इस राष्ट्रीय संस्था का मुखपत्र है, इसलिए इसके हिन्दी भाषी सदस्यों को निशुल्क भेजी गयी ताकि पत्रिका के प्रकाशन की सूचना व्यापक रूप में प्रचारित–प्रसारित हो सके। अनेक स्थानों पर शोध पत्रिका के लोकापर्ण के सार्वजनिक कार्यक्रम आयोजित किये गये ताकि समाचार पत्रों तथा अन्य संचार साधनों के माध्यम से विस्तृत सूचना हो सके। दि इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस के अग्रभाग में शोध पत्रिका के विषय में सूचना प्रकाशित की गई ताकि जर्नल के पाठक भी इसके प्रशासन से अवगत हो सकें। देश भर के समस्त हिन्दी भाषा क्षेत्र के विश्वविद्यालयों के कुलपतियों और उच्च शिक्षा संस्थानों के अध्यक्षों को पत्र प्रेषित कर पत्रिका की सदस्यता और आलेख हेतु व्यापक प्रचार–प्रसार का अनुरोध किया गया। ई–मेल तथा इन्टरनेट के माध्यम से भी शोध पत्रिका में सहभागिता में वृद्धि हेतु निवेदन किये गये। खेद का विषय है कि पूर्वोक्त समस्त प्रयास लगभग निष्फल सिद्ध हुए हैं। शोध पत्रिका की सदस्यता संख्या नगण्य बनी हुई है। शोध आलेखों की संख्या अभी नाममात्र की है। समीक्षक विद्वानों की टिप्पणियों के आलोक में प्रकाशन योग्य आलेख खोजना और दुष्कर कार्य बना हुआ है।

इस बिन्दु पर हिन्दी भाषा में एक स्तरीय शोध पत्रिका की अनिवार्यता और उपादेयता की चर्चा करना कदाचित अनावश्यक है। हिन्दी भाषी क्षेत्रों के विद्यार्थियों की आवश्यकताओं और अपेक्षाओं को दृष्टिगत करते हुए विषय के विभिन्न आयामों पर स्तरीय सामग्री की अपरिहार्यता का वर्णन भी शायद निरर्थक है। परन्तु लगभग पन्द्रह राज्यों में विद्यमान दो सौ विश्वविद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों, शोधार्थियों, एवं विद्यार्थियों के समग्र से वर्तमान स्थिति से अधिक की अपेक्षाएँ रखना स्वाभाविक है। अतः वर्तमान सम्पादकीय में विषय और राष्ट्र की किसी समस्या पर लिखने की बजाय पुनः शोध पत्रिका के भविष्य पर आपसे विचार–विमर्श करना ही मुझे श्रेयस्कर प्रतीत हुआ।

राजनीति विज्ञान और लोक प्रशासन के अनुशासन में प्रायः अंग्रेजी माध्यम में ही स्तरीय शोध तथा व्यवस्थित विश्लेषणात्मक लेखन उपलब्ध होता है। विशुद्ध हिन्दी माध्यम से अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों

के लिए वैज्ञानिक पद्धति आधारित गवेषणात्मक आलेख तैयार करना मात्र ही हमारा दायित्व नहीं है अपितु अपने सहगियों, सहकर्मियों, शोधार्थियों एवं विद्यार्थियों में नवीन शोध, ज्ञान, साहित्य और लेखन में रुचि तथा वांछनीय जिज्ञासा जागृत करना भी हमारा ही कर्त्तव्य है। स्वयं अपने स्तर पर प्रकाशन योग्य सामग्री शोध पत्रिका में प्रकाशानार्थ प्रेषित करना ही कार्य है। अपने शोधार्थियों के शोध निष्कर्षों को शोध पत्रिका के माध्यम से विद्वत समाज के समक्ष प्रस्तुत करने हेतु प्रोत्साहित करना भी हमारी जिम्मेदारी है। अपने अध्ययन कक्षों में, अध्यापन कक्षों में, संगोष्ठियों में, वक्तत्यों में, आलेखों में और बैठकों में हिन्दी माध्यम की उपादेयता का जाप करने मात्र से शोध और लेखन भला नही होगा। वाचिक सहानुभूति नहीं कायिक सहयोग ही इस उपक्रम का कल्याण कर सकेगा। अतः पुनः आप सबसे अनुरोध है कि शोध पत्रिका के माध्यम से राजनीति विज्ञान और लोक प्रशासन के उन्नयन की मुहिम यथाशक्ति साहाय्य प्रदान करें।

भवन्निष्ठ

(संजीव कुमार शर्मा)